The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 5 | May 2024
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण, महिला अधिकार व उनकी वर्तमान प्रासंगिकता का अवलोकन

प्रदीप कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
डॉ० बी०आर० अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान वि०वि०
महू (म०प्र०)

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Keywords:

महिला सशक्तिकरण, महिला अधिकार समानता, सामाजिक न्याय संवैधानिक प्रावधान, लैंगिक समानता

ABSTRACT

भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण और अधिकार का प्रश्न सदैव से ही सामाजिक परिवर्तन, न्याय और समानता की दिशा में केंद्रीय भूमिका निभाता आया है। प्राचीन भारत में नारी को शक्ति, ज्ञान और संस्कृति का प्रतीक माना जाता था, किंतु समय के साथ सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक संरचनाओं ने उनके अधिकारों को सीमित कर दिया। आधुनिक काल में शिक्षा, स्वतंत्रता आंदोलन और संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से महिलाओं को पुनः समान अधिकार और अवसर प्राप्त हुए है किंतु वह फिर भी अपने उन अधिकारों के लिए संघर्ष कर रही है। महिला सशक्तिकरण का आशय केवल शिक्षा या रोजगार तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें आर्थिक स्वतंत्रता, राजनीतिक भागीदारी, सामाजिक समानता, निर्णय लेने की क्षमता ओर आत्मनिर्भरता शामिल है। वहीं महिला अधिकार का आशय उन संवैधानिक और कानून प्रावधानों से है जो महिलाओं को समानता, गरिमा और न्याय की गारंटी प्रदान करते हैं। आज के समय में महिला सशक्तिकरण और अधिकार केवल सामाजिक न्याय का ही नहीं बल्कि आर्थिक विकास और लोकतांत्रिक सुदृढ़ता का भी आधार

बन चुके हैं। शिक्षा, सूचना प्रौद्योगिकी, स्वरोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के क्षेत्र में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी यह दर्शाती है कि विभिन्न प्रयासो के बावजूद भी, महिलाओं के जीवन में चुनौतियों निरंतर बनी हुई है जिसमें लैंगिक असमानता, बाल विवाह, घरेलू हिंसा, कार्यस्थल पर उत्पीड़न और ग्रामीण शहरी असमानता आदि प्रमुख है।

प्रस्तावना :–

प्रगतिशील समाज में जहाँ एक और हम अंतरिक्ष तक पहुँच चुके है वही विश्व की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा अर्थात् महिलाएँ आज भी समानता और स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए निरंतर संघर्ष कर रही हैं। महिलाएँ समाज का अभिन्न अंग हैं उनके अस्तित्व के बिना मानव सभ्यता की कल्पना करना भी असंभव है। भारतीय संस्कृति में **'अर्धनारीश्वर'** की संकल्पना स्त्री की महत्ता एवं पुरुषों के समानांतर अधिकारों की परिचायक है किन्तु आज अपने अधिकारों को पाने निरंतर संघर्ष करती महिला की तस्वीर इस संकल्पना पर प्रश्न चिन्ह लगाती है। वैदिक कालीन संस्कृति स्त्री तथा पुरुष के समान अधिकारों की पक्षधर रही है यहाँ ऐसे अनेकों वृत्तान्त है जो कि तत्कालीन महिला के स्थापत्य को दर्शाते हैं, जैसे कि ब्रश्वादिनी गार्गी जिन्होंने विद्वान यागवलक्य को शास्त्रार्थ में पराजित किया, देवमाता अदिति चारों वेदों की ज्ञाता, देव साम्राज्ञी शुचि जिन्होंने ऋग्वेद के अनेकों शूद्रों पर अनुसंधान किया, इसके अतिरिक्त अनेकों नाम जैसे कि बोषा, अपाला, तपती, विघोतमा, आदि वैदिक काल में स्त्री की महती भूमिका का वर्णन करते हैं, किंतु मध्यकालीन युग में हुए पितृसत्तात्मक परिवर्तन से महिलाओं की व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक स्थिति में विभेदीकरण का प्रवेश होने लगा। उनके अधिकार, स्वतंत्रता एवं स्वावलम्बन में ह्रास हुआ। अनेकों रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों ने महिलाओं की स्थिति को शनेः शनेः दयनीय कर दिया।

ऐसे में जागरूक महिलाओं एवं प्रगतिशील पुरुषों ने नारी विमर्श, नारी संघर्ष, एवं नारी आंदोलनों जैसी विचारधाराओं की शुरुआत की। नारी विमर्श को लेकर प्रारंभ में फ्रेंच लेखिका 'सिमोन दी बोवुआर' द्वारा लिखित पुस्तक 'दी सेकंड सेक्स' एवं 'मैरी एलमन' द्वारा लिखित पुस्तक 'चिकिंग अबाउट वीमन' मील का पत्थर साबित हुई। 1857 में संयुक्त राज्य अमेरिका में महिलाओं एवं पुरुषों के

समान वेतन को लेकर हड़ताल हुई, इसी दिन को बाद में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाने लगा। भारत में महिला विमर्श एवं आंदोलन की शुरुआत 'नवजागरण काल' से आरम्भ हुई जिसमें कि राजा राम मोहन राय, पंडित रमाबाई, सावित्री बाई फूले, एवं तारा बाई शिंदे आदि नाम प्रमुख हैं। सतत् महिला विमर्श ने प्रत्येक क्षेत्र में महिला अधिकारों एवं समानता के लिए सिफारिश की है। आधुनिक युग में विज्ञान एवं शिक्षा से लेकर समाज एवं राजनीति तक कोई भी क्षेत्र महिला प्रवेश एवं योगदान से अछूता नहीं है। निरंतर महिला विमर्श, संघर्ष एवं आंदोलनों से समाज, शासन एवं प्रशासन महिलाजों की कार्यक्षमता व कुशलता के प्रति जागरूक हो रहे हैं। परिणाम स्वरूप आज की महिलाजों की स्थिति गत शताब्दी की महिलाओं की अपेक्षा निरंतर उन्नत हो रही है।

देश में आज अनेक महिलाएँ मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सी.ई.ओ.) के पद को सुशोभित करके अपने दायित्व का निर्वाहन भली–भांति कर रही हैं। इंदिरा नूई, रत्ना शाह, शाहनाज हुसैन, सुनीता विलियमा, अरूंधति भट्टाचार्य, श्रीमती जे. मंजुला न जाने ऐसी कई हस्तियों हैं, जो अपने–अपने कार्यक्षेत्र में शिखर पर आसीन हैं। जबकि अमेरीका में 10 फीसदी व ब्रिटेन जैसे विकसित देश में यह आंकड़ां महज 3 फीसदी है। यद्यपि सिविल सेवा के इम्तिहान में बैठने बाली महिलाओं के सफल होने की दर में वृद्धि दर्ज की जा रही है और इस सेवा में आने वाली महिलाओं की संख्या में भी वृद्धि हुई है। भारतीय प्रशासनिक सेवा में 1974 से 8.8 प्रतिशत महिलाओं भागीदारी थी जोकि वर्तमान में 12 प्रतिशत से भी अधिक हो गई है। साथ ही महिलाएँ न्यायाधीश (7 फीसदी) और भारतीय पुलिस सेवा (आई.पी.एस.) में 5 फीसदी हैं।

महिला सशक्तिकरण से अभिप्राय महिलाओं को सामाजिक सुविधाओं की समान उपलब्धता, राजनैतिक व आर्थिक नीति निर्धारण में सतत् भागीदारी, समान कार्य और समान वेतन, कानूनी प्रावधानों के तहत महिला सुरक्षा व प्रजनन अधिकारों का सही रूप में पहचानना और उसके लिए स्वयं को पूर्ण रूप में सशक्त करना है। महिला सशक्तिकरण के द्वारा महिलाओं मे जागरूकता का प्रसार कर उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षिक एवं स्वास्थ्य संबंधित साधनों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है, जिससे सामाजिक न्याय व समानता का लक्ष्य हासिल हो सके। सत्ता के संगठनों में महिलाओं की सशक्त भागीदारी और आज हमारे समाज में यह सवाल अहम हो रहा है, कि सदियों से समाज का आधा भाग रही महिलाओं को क्या नहीं मिला, जिसकी वास्तव में हकदार थी

और क्या आज भी उनके हक की दरकार बनी हुई है। स्वयं की पहचान और आस्तित्व के संघर्ष में महिलाओं ने भारत सहित दुनिया भर में अनेक आन्दोलन चलाए।

इन आन्दोलनों में नारीवाद की मुखर आवाज को जहाँ एक ओर स्वीकृति मिली वहीं उनके विरुद्ध होने वाले अत्याचारों में भी बढ़ोतरी हुई है। यह परिणाम है उस सामन्ती सोच का जहाँ महिलाओं को बेजुबान रखने, उन्हें वस्तु समझाने की, उनके बारे में पितृसत्तात्मक निर्णय करने की सदियों पुरानी रुढिवादी परम्पराओं का पोषण आम बात रही है।

निःसन्देह आधुनिक युग के जीवन मूल्यों में लैंगिक समानता की आवाज ने, सत्ता के गलियारों में दस्तक दी है, और नीति निर्माताओं को विवश किया कि अब समय गंवाए बिना महिलाओं की भूमिका को रेखांकित करे। उनके आत्मनिर्णय के अधिकार को आजाद ख्याल से मान्यता दी जाए। किन्तु सब कुछ इतनी सहजतापूर्ण बदल जाता तो स्वर्ग की कल्पना जमीं पर ही साकार हो गयी होती। परम्पराओं में महिलाएँ कभी भी अपनी भूमिका का निर्धारण स्वयं न कर सकी ये तो सदैव पुरूषों की जरूरतों के मुताबिक अपने दायित्वों का निर्वहन करती चली आई हैं। आज जब महिलाएं अपने हिस्से के खुले आसमान की माँग करती हैं तो उनके समक्ष ऐसी चुनौतियां प्रस्तुत कर दी जाती हैं कि उन्हें आजादी अथवा सुरक्षा में से एक ही मिल पाए। विडम्बना यही है कि परम्पराओं में रहकर महिलाएँ सुरक्षा की कीमत अपनी आजादी के त्याग से चुका रही हैं और अगर आधुनिकता ने उन्हें कुछ आजादी दी भी है तो उसकी कीमत ये अपनी सुरक्षा के जोखिम से चुका रही हैं। महिलाओं के सम्बन्ध सुरक्षा और आजादी के सन्तुलन की व्यवहारिक स्थिति पर संकट के बादल लगातार मंडरा रहे हैं।

प्राचीन भारत के धर्मग्रन्थों में स्त्रियों की स्थिति को 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' से सम्मानित किया गया वहीं उसे सामान्य जीवन में अबला कह कर अपमानित किया गया। ज्ञान, शक्ति, धन, एश्वर्य की प्रतीक देवियों के देश में महिलाएँ अज्ञानता, शक्तिहीनता, आर्थिक तंगी और भूख के कारण अपने शारीरिक अस्तित्व को बचाने की चुनौती से जूझ रही है। 'बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओं' का अभियान भी उनके शारीरिक अस्तित्व के संकट को बचा नहीं पा रहा है। जन्म से पूर्व कन्या भ्रूण की हत्या, जन्म के बाद कुपोषण, यौन हिंसा, घरेलु हिंसा और जीवन के हर मोड पर भेदभाव का असुरक्षित वातावरण उनके प्रति लैंगिक असमानता की कड़वी सच्चाई को उजागर करता है।

जीवन के तमाम क्षेत्रों में महिलाओं को आज भी जानबूझ कर उपेक्षित बनाया जा रहा है। सामाजिक स्थिति में गिरावट का बड़ा कारण धार्मिक है, क्योंकि सभी धर्म पुरूषों के पक्ष अधिक हैं। नैतिकताओं की भी भिन्न धारणाएँ प्रचलित हैं, जिनका फायदा पुरूष उठा रहे हैं और महिलाओं के हिस्से नुकसान आता है पिण्डदान, वारिस और अन्तेष्टि जैसे संस्कार बुनियादी रूप से पुरुषों के लिए बने हुए हैं। आर्थिक स्थिति की तस्वीर और भी भयावह है। घरेलू कार्यों या खेतों में कृषि कार्यों में संलग्न महिला श्रम को कोई उत्पादक कार्य नहीं माना जाता। आर्थिक मामलों में अधिकांशत निर्णय करने की बात तो छोड़ दे उनकी सलाह की प्रत्याशा भी मान्य नहीं। जबकि आंकड़े कहते हैं कि महिलाएँ एक सप्ताह में 77 घंटे काम करती हैं और पुरूष मात्र 40 घंटे ही अपना श्रम योगदान देकर नेतृत्व की बागडोर संभाले हुए हैं।

महिला सशक्तिकरण का अभिप्रायः–

महिला सशक्तिकरण का अभिप्राय महिलाओं को अधिकार प्रदान करना है जिससे महिलाएं सामाजिक और आर्थिक स्तर के साथ ही राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी अपनी स्वतंत्र और सार्थक भूमिका निभा सके। सशक्तिकरण का अर्थ केवल आर्थिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय की क्षमता, शिक्षा का अधिकार राजीतिक भागीदारी और सामाजिक सम्मान से है।

भारतीय समाज में लंबे समय तक महिलाओं को घरेलू कार्य तक सीमित रखा गया लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के आंदोलन में उनकी सक्रिय भागीदारी, जैसे कस्तूरबा गांधी, अरुणा आसफ अली और रानी लक्ष्मीबाई जैसी महिलाओं ने यह साबित किया कि महिलाएँ सामाजिक परिवर्तन की धुरी हो सकती है। स्वतंत्र भारत में संविधान के द्वारा महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और गरिमा के अधिकार प्रदत्त है।

महिला सशक्तिकरण का सबसे बड़ा हथियार शिक्षा को माना जाता है। आज महिलाएँ न केवल शिक्षित हो रही है बल्कि रोजगार, प्रशासन, न्यायपालिका, सेना और राजनीति तक अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज कर रही है। आत्मनिर्भर भारत अभियान, बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओं योजना, महिला स्वयं सहायता समूह और स्टार्टअप नीति जैसे कार्यक्रमों ने महिला सशक्तिकरण को नए आयाम दिए हैं। फिर भी, वास्तविक सशक्तिकरण तभी संभव होगा जब महिलाएँ निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनें और उन्हें अपने जीवन से जुड़े मुद्दों पर निर्णय लेने की आजादी मिले। शिक्षा के क्षेत्र में भी आमतौर पर महिलाओं को कम पढ़ाया–लिखाया जाता है। पहले तो पढ़ाने के लिए असुरक्षित परिवेश के तनाव को

झेलने पड़ेंगे और पढ़–लिख गई तो उनकी योग्यताएँ दहेज की बलिवेदी पर हर हाल में चढ़नी हैं। इसके चलते शैक्षिक स्तर पर लैगिक विभेद दृष्टिगोचर होता है।

राजनीति क्षेत्र में महिलाओं का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात में कम है। संसद एवं विधानमण्डलों में उनकी संख्या 10% से भी कम है जबकि वे कुल आबादी का 48 प्रतिशत हैं। विधायिकाओं में 33% सीटों का महिला आरक्षण लम्बे समय से प्रतीक्षारत है। कोई लोकतान्त्रिक समाज अपनी महिलाओं के न्यायोचित प्रतिनिधित्व के बिना सफल नहीं हो सकता।

❖ **महिला उत्थान के अद्यतन प्रयास :–**

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्थिति और परिस्थिति में सुधार करने तथा उनकी सामाजिक एवं आर्थिक हैसियत में बदलाव कर मुख्य धारा में लाने की नितान्त आवश्यकता है। इसी उद्देश्यानुसार स्वतंत्र भारत में 1950 के दशक की महिला विकास के रूप में, तो 1990 का दशक उनके सशक्तिकरण को समर्पित किया गया। संवैधानिक स्थिति में प्राप्त मौलिक अधिकारों के अनुच्छेद (14), अनुच्छेद (15.5) अनुच्छेद (16) को महिला उत्थान को केन्द्र में रखकर विशेष प्रयास किए जा रहे हैं। निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद (39) समान कार्य–समान वेतन एवं अनुच्छेद (42) से काम करने की न्यायसंगत और मानयोचित दशा तथा प्रसूति सहायता पर निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं।

जहाँ तक वैधानिक प्रावधानों का प्रश्न है इस ओर काफी सार्थक प्रयास भी हुए जैसे सती प्रथा निषेध कानून, पुनर्विवाह कानून, बाल विवाह निषेध कानून, तलाक, उत्तराधिकार, नाबालिग सरक्षण दत्तक एवं पोषण, अनैतिक व्यापार व दहेज निरोधक कानूनों के द्वारा महिलाओं को सशक्त करने का प्रयास किया गया है और निरन्तर संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप शासन के स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। 1992 में महिला कल्याण को सरक्षित करने के लिए केन्द्र एवं राज्य स्तर पर महिला आयोगों की स्थापना की गयी। महिला सशक्तिकरण नीति को वर्ष 2001 में लागू किया गया है।

यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने सवैधानिक एवं वैधानिक प्रावधानों की सकारात्मकता से महिलाओं सामाजिक की स्थिति को सुधारने के लिए लगातर कारगर कदम उठाए, जिससे कुछ हद तक ही सही उनकी स्थिति में बदलाव आ रहा है किन्तु जिस सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा एक लोकतान्त्रिक मूल्यों वाली राजनीतिक व्यवस्था में नारीवादी आन्दोलनों को भी हो वैसा महिला उत्थान अथवा महिला सशक्तिकरण न केवल अभी शेष है, बल्कि सामान्यीकरण में सम्भवतयां कई दशक और लग सकते हैं।

इस स्थिति की तस्वीर के पीछे, महिलाएं सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा कानूनी उपेक्षा का शिकार रही हैं। किसी वर्ग के पिछड़ जाने के पीछे दो कारण मौजूद होते हैं या तो कोई वर्ग व्यक्तिगत कारण या सामाजिक व्यवहार के कारण पिछड़ता है। महिलाओं के सम्बन्ध में प्रथम कारण उतना जिम्मेदार नही, क्योंकि वे अपनी स्थिति को बदलने का प्रयास अपनी औकात से अधिक कर रही हैं किन्तु आम सांस्कृतिक मूल्यों, विश्वासों और आस्थाओं पर उपजा व्यवहार उन्हें लगातार पिछड़े वर्ग की ओर धकेल रहा है। सांस्कृतिक नियमों के लम्बे अभ्यास ने लगभग धार्मिक मान्यताओं वाले समाजों को पितृसत्तात्मक बनाया है। ऐसे समाजों में लगातार महिलाओं की भूमिका को निर्णय प्रक्रियाओं का हिस्सा बनने से रोका गया और उन्हें हाशिए पर धकेला गया। आर्थिक रूप से महिलाएँ शक्तिहीन बनाकर रखी गई। उन्हें पुरुषों पर निर्भर रखा गया जिससे उनकी भूमिका पुरुषों की इच्छानुसार तय हो सके। अगर वे कहीं आत्मनिर्भर दिखती भी हैं तो कई बार यह आभाषीय नजर आती हैं।

महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान हेतु कई कानून बनाए गए है, जिन्होंने महिलाओं के जीवन की विषमताओं के समाधान का प्रयास किया किंतु वास्तव में वे कार्यक्रम भी शत–प्रतिशत सफल न हुए। दहेज निषेध अधिनियम (1961), घरेलू हिंसा अधिनियम (2005), कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न रोकथाम अधिनियम (2013) तथा मातृत्व लाभ अधिनियम (1961, संशोधित 2017) आदि प्रमुख प्रावधान है।

संयुक्त राष्ट्र ने भी लैंगिक समानता को सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) में शामिल किया है। भारत ने इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कई योजनाएँ प्रारंभ की हैं। इसके अलावा, पंचायती राज व्यवस्था में 33% आरक्षण और कई राज्यों में 50% आरक्षण ने ग्रामीण क्षेत्र महिलाओं को भी निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनाया है।

आज महिला अधिकार केवल कानूनी सुरक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें समान वेतन, शिक्षा, स्वास्थ्य और राजनीतिक प्रतिनिधित्व भी शामिल है। हालांकि, ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी महिलाओं को बाल विवाह, दहेज प्रथा, और सामाजिक रूढ़ियों जैसी बाधाओं से जूझना पड़ता है। महिला अधिकारों के वास्तविक कार्यान्वयन के लिए समाज में मानसिकता परिवर्तन आवश्यक है। जब तक परिवार और समाज में महिलाओं को पुरूषो के समान दर्जा नहीं मिलेगा, तब तक महिला अधिकार केवल कागजों तक सीमित रहेंगे।

महिला सशक्तिकरण और अधिकारों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता :–

महिला सशक्तिकरण और अधिकार आज के समय में भारत में लोकतंत्र और विकास की आत्मा बन चुके हैं। वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण और शिक्षा के विस्तार ने नारियों के लिए अवसरों के नए दरवाजे खोले हैं। महिलाएँ न केवल परिवार और समाज बल्कि उद्योग, राजनीति, विज्ञान, खेल और कला सभी क्षेत्रों में योगदान दे रही हैं। 2025 में जब भारत 'विकसित राष्ट्र' बनने की दिशा में अग्रसर हो रहा है, तब महिला सशक्तिकरण उसकी सफलता का मुख्य स्तंभ है। विश्व बैंक की रिपोर्ट बताती है कि यदि महिलाओं की श्रम भागीदारी बढ़े तो भारत की GDP में 25% तक की वृद्धि संभव है। फिर भी, लैंगिक असमानता, कार्यस्थल पर असमान वेतन, परेलू हिंसा और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की सीमाएँ अब भी बाधा बनी हुई हैं। ग्रामीण अंचलो में शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की कमी महिलाओं को पीछे धकेलती है। इसलिए वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण और अधिकार केवल सामाजिक सुधार नहीं बल्कि आर्थिक विकास और वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भारत की स्थिति को मजबूत करने की अनिवार्य शर्त बन चुके हैं।

भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण और अधिकार का प्रश्न केवल नारी के सम्मान और गरिमा का नहीं, बल्कि पूरे समाज की प्रगति और संतुलन का है। एक शिक्षित और सशक्त महिला न केवल अपने परिवार का बल्कि पूरे समाज का विकास करती है। संविधान और कानूनों ने महिलाओं को अधिकार तो दिए हैं, किंतु उनका व्यवहारिक क्रियान्वयन अभी भी चुनौतियों से भरा है। शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और राजनीतिक भागीदारी में सुधार के बावजूद घरेलू हिंसा, लैंगिक असमानता और भेदभाव अब भी व्यापक रूप से मौजूद हैं।

अतः आवश्यक है कि महिला सशक्तिकरण और अधिकार केवल नीतियों में न रहकर व्यवहार में भी उतरे।

निष्कर्ष :–

दुनिया के तमाम अन्य देशों की भाँति भारत में भी स्त्री–पुरूष के बीच गैर बराबरी का सच बना हुआ है। अपितु उसकी व्यापकता गम्भीर परिणामों को जन्म देती है। किसी राष्ट्र को सशक्त करने के लिए उस राष्ट्र की महिलाओं का उत्थान जरूरी है। महिला सशक्तिकरण के लिए हमें केवल दो बुनियादी जरूरतों पर फोकस करना हैं वे हैं आजादी उसके व्यक्तित्व निर्माण हेतु निर्णयों हेतु

रूचियों हेतु उसकी भूमिका के रेखांकन के लिए। जबकि एक सुरक्षित वातावरण उसके व्यक्तित्व को आत्मविश्वास से भर देगा। निश्चित तौर पर महिला सशक्तिकरण का प्रश्न अकेले महिलाओं का ही नहीं अपितु महिला और पुरूष दोनों का है। विभिन्न अध्ययनों का विश्लेषण कहता है कि महिला कल्याण के अधिकारों की तमाम डोर पुरूषों में आपेक्षित परिवर्तन की प्रक्रिया से जुड़ी है। मानव जीवन की गतिशील प्रकृति किसी सांस्कृतिक एवं सामाजिक रूढ़ियों की मोहताज नही होनी चाहिए। महिलाओं के सशक्त होने में जायज अधिकारों की माँगों को, शान्तिपूर्ण सामाजिक परिवर्तन से पुरुषों को न केवल स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए अपितु मानवीय दृष्टिकोण के साथ, महिला कल्याण, उत्थान एवं सशक्तिकरण हेतु आजाद एवं सुरक्षित वातावरण निर्माण में योगदान करना चाहिए। तभी बेटी बचेगी, बेटी पढ़ेगी, बेटी बढ़ेगी। इन परिस्थितियों के निर्माण बिना हम महिला को उनके हिस्से की लैंगिक समानता और निर्णय लेने की आजादी का सभ्य समाज प्रदान नहीं कर सकेंगे। महिला सशक्तिकरण तभी सार्थक होगा जब समाज की मानसिकता बदल और महिलाओं को वास्तविक रूप से समान अवसर मिले। नीति और कानून का असर तभी होगा जब उसे समाज में स्वीकार्यता मिले।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- यादव ललित, सरकारी योजनाएं व ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण, राचत प्रकाशन नई दिल्ली–2018
- चौधरी, कृष्ण चन्द्र, महिला सशक्तिकरण सम्पूर्ण पहलू, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार 2018
- बिसवाल तपन, मानवाधिकार जेन्डर एवं पर्यावरण, विया प्रकाशन नई दिल्ली 2018
- अमर उजाला 'प्रयाह' देहरादून संस्करण 02 अप्रैल–2021
- कुरूक्षेत्र पत्रिका, ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार अंक सितम्बर–2014
- मानव अधिकारः नई दिशाएँ, प्रकाशक राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, नई दिल्ली–2013
- सिंह, प्रो. आशा एवं सिंह, डॉ. एस.पी, (2017), महिला सशक्तिकरण निखिल पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स 37, शिवराम कृपाश विष्णु कालोनी शाहगंज, आगरा, ISBN 9789302.72.2 पृ.सं. 11–12

- चौधरी कृष्म धन्द्र (2018), महिला सशक्तिकरण सपूर्ण महानिदेशक प्राशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, सूचना भवन, सी.जी.पाधी रोड, नई दिल्ली–110005 द्वारा प्रकाशित. पू.सं. 1
- शर्मा विजय (2019), बलात्कार, समलैंगिकता एवं अन्य साहित्यिक लेख प्रकाशन अनुज्ञा युक्स, 10206, लेख–1, ई पेस्ट गोरख पार्क, शायरा दिल्ली–110032, ISBN 978.158655 215, पृ. सं. 51
- गुप्ता सुनील एवं सिंह कमल कुमार (2012), सुशासन, निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया नेहस भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल पेरिया, फेज–2, बसंत कुंज, नई दिल्ली–110070 द्वारा प्रकाशित पूरा।
- पालीवाल कृष्णदत्त (2014), नारी विमर्श की भारतीय परम्परा, प्रकाशक सस्ता साहित्य मण्डल, एन–77, पहली मंजिल, कनॉट रार्कस, नई दिल्ली–110001, ISBN: 978.81.7560. 856.2 (PB) पृ.म 65–66